ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292RNI
REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 75-76**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-18, No.-IV, Issues-34, YEAR-Oct-Dec. 2024

गाँधीजी का समाजशास्त्र

डॉ0 धन्नजय कुमार

ग्राम–दमुहा पो0– सैदाबाद जिला– जहानाबाद (बिहार) भारत

Received-11.10.2024, Revised-17.10.2024, Accepted-21.10.2024 **E-mail : akbar786ali888@gmail.com**

सारांशः गाँधीजी ने आधुनिक सभ्यता के आधारों को ही चुनौती दी। आधुनिक पाश्चात्य सभ्यता की कृत्रिमता, औद्योगिक प्रगति, धर्म निरपेक्षता, आक्रमकता तथा लोलुपता ये गाँधीजी को घृणा थी। अतः प्लेटों, तॉल्सतॉय और रूसों की भाँति गाँधीजी ने प्रकृति की ओर लौटने का सन्देश दिया और बतलाया कि सच्ची सभ्यता भोग–सामग्री का संचय करना नहीं है। जानबूझकर और स्वेच्छा से अपनी आवश्यकताओं को कम करना ही वास्तविक सभ्यता है। स्मेंगलर से भी गाँधीजी ने पश्चिमी सभ्यता के पतन और विनाश की भविष्यवाणी कर दी थी। किन्तु उन्हें इस बात में अपरिमित विश्वास था कि मानव–आत्मा में नवजीवन प्राप्त कर लेने की अपार शक्ति है, और इसलिए वे कहा करते थे कि अहिंसा पाश्चात्य सभ्यता को रोगमुक्त करने के लिए बलवर्धक काम कर सकती है।

कुंजीभूत शब्द– आधुनिक सभ्यता, चुनौती, पाश्चात्य सभ्यता, औद्योगिक प्रगति, धर्म निरपेक्षता, आक्रमकता, मूर्तिमान, नवजीवन

गाँधी जी राजनीति, समाजशास्त्र तथा अर्थशास्त्र को आध्यात्मिकता की ओर उन्मुख करने के पक्ष में थे। उनका कहना था कि सत्य और अहिंसा को समाजवाद के रूप में मूर्तिमान होना चाहिए, क्योंकि "अहिंसा की पहली शर्त यह है कि सर्वत्र तथा जीवन के हर क्षेत्र में न्याय की स्थापना की जाय।" किन्तु समाजवाद का पाश्चात्य सिद्धान्त हिंसा के वातावरण में उत्पन्न हुआ है। सत्याग्रह ही सच्चा समाजवाद लाने का एकमात्र साधन हैं।

भारत की आधुनिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए गाँधीजी ने ग्रामोद्धार का बीड़ा उठाया। उन्होंने ग्रामीण जीवन की एकता तथा बुनियाद को सुरक्षित रखने के लिए अथक प्रयत्न किया। गाँधीजी ने देखा कि भारत गाँवों में बसता है। इसलिए उनका "गाँवों को लौटो" का नारा न तो काल्पनिक था और न प्रतिक्रियावादी। मार्क्सवादियों तक ने स्वीकार किया है कि देहाती तथा शहरी क्षेत्रों के बीच सन्तुलन करना आवश्यक है। पश्चिम में विशाल शहरी केन्द्रों की वृद्धि की भर्त्सना की गयी है। पश्चिम के कुछ समाजशास्त्रियों के भाँति गाँधीजी का भी विश्वास था कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ और समृद्ध होने से लोकतंत्र को नयी शक्ति और स्फूर्ति मिलेगी। गाँधी जी ने उन्नीसवीं शताब्दी के अहस्तक्षेप के सिद्धान्त की आलोचना की। उन्होंने इस क्रांन्तिकारी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया कि "भूमि उसकी है जो इसे जोतता है। उनकी दृष्टि में चरखा श्रम की प्रतिष्ठा का प्रतीक था साम्राज्यवाद, नस्लवाद (रैस), सम्प्रदायवाद, तथा दलित एवं निम्नवर्ग की मुक्ति संबंधी संघर्षों में गाँधीजी का अद्वितीय योगदान रहा, जो उनके सामाजिक न्याय के प्रति लगाव का प्रतिफल है।

गाँधीजी आर्थिक समानताके सिद्धान्त को स्वीकार करते थे। उनका कहना था कि अब लोगों को अपनी स्वाभाविक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक वस्तुएँ उपलब्ध होनी चाहिए। वे "प्रत्येक को उसकी आवश्यकतानुसार" के मार्क्सवादी सिद्धान्त में विश्वास करते थे। उनके अनुसार आर्थिक समानता के मूल तत्त्व है– प्रत्येक परिवार को सन्तुलित भोजन रहने के लिए अच्छा घर, डाक्टरी सहायता तथा बच्चों की शिक्षा की सुविधा। समाजवाद तथा गाँधीवाद दोनों ही आर्थिक समानता पर आधारित समाज की स्थापना करना चाहते हैं, किन्तु गाँधीजी का मार्ग अनुभवातीत, संन्यासमूलक तथा नैतिक है। इसके विपरीत आधुनिक समाजवाद का आदर्श मुख्यतः भौतिकवादी और धर्मनिरपेक्ष है तथा उत्पादन की वृद्धि पर अधिक जोर देता है। अतः इस दृष्टि से गाँधीजी और समाजवाद में साम्य नहीं है।

गाँधीजी सरल तथा आंडम्बहीन प्राकृतिक जीवन की ओर लौटने के समर्थक थे। "हिन्द स्वराज" में उन्होंने विशाल उद्योगों मशीनीकरण तथा पाश्चात्य वाणिज्यवाद, साम्राज्यवाद और धर्मनिरपेक्षतावाद को रोग बतलाया और उनकी भर्त्सना की, किन्तु वे पूर्णतः ग्राम्यवादी नहीं थे, उन्होंने शुद्ध ग्राम्य जीवन की ओर लौट चलने का समर्थन नहीं किया। अपने परवर्ती जीवन में बहुत कुछ यथार्थवादी बन गये थे। कम से कम भविष्य के भारतीय समाज के सन्दर्भ में उन्होंने इस बात का समर्थन किया कि विशाल उद्योगों और लघु उद्योगों का सामंजस्य किया जाय, मूल उद्योगों का राष्ट्रीयकरा हो और शहरी केन्द्रों की अव्यवस्थित एवं एकांगी वृद्धि को रोका जाय और उन्हं इस ढंग से संगठित किया जाय कि वे गाँवों की जहाँ भारत की आत्मा निवासी करती है, आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। वे लिखते हैं, "साथ ही साथ मेरा विश्वास है कि कुछ मूल उद्योगों की आवश्यकता है। मुझे कोरी बातों के समाजवाद में विश्वास नहीं है और न मेरी सशस्त्र समाजवाद में ही आस्था है। मैं अपने सिद्धान्तों के अनुसार कर्म करने में विश्वास करता हूँ, मैं उस समय की प्रतीक्षा नहीं करना चाहता जब लोग सामूहिक रूप से समाजवाद के आदर्श को अंगीकार कर लेंगे। अतः मैं मूल उद्योगों के नाम गिनाना आवश्यक नहीं समझता। मैं तो केवल यह चाहूँगा कि जिन उद्योगों में बड़ी संख्या में लोग साथ–साथ काम करते हो उन पर राज्य का स्वामित्व स्थापित कर दिया जाय। सभी कुशल तथा अकुशल श्रमिकों के उत्पाद का स्वामित्व राज्य के द्वारा स्वंय उन्हीं में निहित होगा। किन्तु मेरी कल्पना का राज्य अहिंसात्मक होगा, इसलिए मैं बलपूर्वक धनी लोगों को उनके धन से वंचित नहीं करूँगा, मैं उन्हें आमंत्रित करूँगा, कि वे राजकीय स्वामित्व स्थापित करने की प्रक्रिया में सहयोग दें। समाज में कोई अछूत नहीं है चाहे वह करोड़पति हो और चाहे भिखारी।" गाँधीजी गाँव में बिजली पहुँचाने के भी विरूद्ध नहीं थे। किन्तु खादी तथा ग्रामीण उद्योगों के प्रति उनका गहरा अनुराग था। उन्हें डर था कि भारत कहीं सैन्यीकृत राष्ट्र न हो जाय, और यदि ऐसा हुआ तो ग्रामद्योग तथा खादी, जिन्हें वे अहिंसा का प्रतीक मानते थे पूर्णतः विनष्ट हो जायेंगे।

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-18, No.-IV, Issues-34, YEAR-Oct-Dec. 2024

गाँधीजी के नीतिशास्त्र का आधार वह व्यक्ति है जो नैतिक साधनों से अपने चरित्र का उत्थान करने का प्रयत्न करता है। उन्होंने वकील, डाक्टर, शिक्षक, मेहतर आदि सबकों समान वेतन देने के क्रांन्तिकारी सिद्धान्त का समर्थन किया और बतलाया कि यही सब सामाजिक तथा आर्थिक बुराइयों की रामबाण औषधि है। धन संचित करने की व्यक्तिवादी प्रवृत्ति सभी बुराइयों की जड़ है। इसलिए उन्होंने "धन के विवेकपूर्ण नियमन तथा सामाजिक न्याय" का समर्थन किया। गाँधीजी का कहना था कि ईश्वर उन लोगों का मित्र नहीं है जो दूसरों का धन हड़पना चाहते है। धन की लिप्सा मनुष्य को किसी न किसी रूप में शोषण करने के लिए विवश करती है। गाँधीजी ने आध्यात्मिक समाजवाद के आदर्श को भी स्वीकार किया और कहा कि स्वराज तब तक पूर्ण नहीं हो सकता जब तक कि समाज के क्षुद्रतम तथा निम्नतम् वर्गों को भी जीवन की वे सब साधारण सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हो जाती जो अमीर लोगों को प्राप्त है। गाँधीजी के समाजवाद में राजा तथा किसान, धनी तथा दरिद्र, मालिक तथा नौकर सबके साथ समान बर्ताव किया जायगा, किन्तु गाँधीजी के अनुसार इस प्रकार समाजवाद की स्थापना किसी संगठित दल के द्वारा राजनीतिक शक्ति पर अधिकार करके नहीं की जा सकती। यह नितान्त आवश्यक है कि समाजवादी सत्यपरायण, अंहिसक तथा शुद्ध ह्रदय के हों। वे सच्चा परिवर्तन ला सकते हैं। इसलिए गाँधीजी ने अपनी राजनीतिक योजना में व्यक्ति के शुद्धीकरण पर सबसे अधिक बल दिया। जिस आध्यात्मिक समाजवाद की स्थापना गाँधीजी करना चाहते थे, उसका समारम्भ व्यक्ति के नैतिक उद्धार से ही हो सकता है। यद्यपि गाँधीजी राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक व्यवस्था के विरोधी नहीं थे। बुद्ध की भांति गाँधीजी का भी विश्वास था कि शुत्र के सहयोगी तथा सहायक में परिवर्तन करना है। जिस प्रकार अरस्तू ने कहा कि मनुष्य की नैतिक शक्तियों को उदात्त बनाना आवश्यक है, और बाहरी संगठनों के ऊपरी परिवर्तनों पर अधिक भरोसा नहीं करना चाहिए उस प्रकार गाँधीजी केवल ब्रिटिश शासन का तथा आंग्ल भारतीय पूँजीपतियों और सामन्तों द्वारा किये जा रहे, समाज के शोषण का ही अन्त नहीं करना चाहते थे, बल्कि वे शोषण की इच्छा का ही उन्मूलन करने के पक्ष में थे, क्योंकि उनका विश्वास था कि मनुष्य की प्रकृति में जन्म से ही कुछ दैवीय अंश विद्यमान रहता है। गाँधीजी की दृष्टि से पारस्परिक सक्रिय प्रेम एवं सामंजस्य पर आधारित समाज व्यवस्था की नितान्त आवश्यकता है। उन्होंने वर्णाश्रम पर आधारित समाज व्यवस्था को स्वीकार किया। यद्यपि भेद भाव, ऊँच नीच के गाँधी जी विरोधी थे। गाँधी जी इस तथ्यकों प्रमाणित करना चाहते थे कि कुछ सामाजिक संस्थाएँ जो देश के ऐतिहासिक विकास में लगभग सदैव व्याप्त रहीं है। वास्तव में बुद्धिसंगत है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सोशियोलिज्म एण्ड सत्याग्रह हरिजन। 20 जुलाई, 1947। गाँधीजी का दृढ़ विश्वास था कि सत्यग्राह समाज की राजनीतिक नैतिक तथा आर्थिक सभी बुराइयों का अन्त कर सकता है। उनका कहना था कि अनिश्वरवादियों को समाजवाद कहीं भी नहीं ले ला सकता।
2. यंग इंडिया मार्च 19, 1939। गाँधीजी को यह देखकर दुःख होता था कि बहुत–से–वस्त्र व्यापारी अभी भी व्यक्तिगत स्वतंत्रता का ढिंढोरा पीट रहे थे।
3. हरिजन, मार्च, 31, 1946। भूमि के कानूनी अधिकार के संदर्भ में गाँधीजी का यह सिद्धान्त उनके अधिकार के संदर्भ में गाँधीजी का यह सिद्धान्त उनके इस दूसरे सिद्धान्त के विपरीत पड़ता है कि जमींदार किसानों के ट्रस्टी हैं। 1939 में द्वितीय गोलमेज परिषद की संघीय समिति में भाषण करते हुए गाँधीजी ने कहा था : "न तो काँग्रेस की ही इच्छा है और न इन मूक भिखारियों की इच्छा है कि जमींदारों से इतनी भूमि आदि छीन ली जाय। किन्तु जमींदारों से इतनी भूमि आदि छीन ली जाय। किन्तु जमींदारों को उनके न्यासधारियों के रूप में कार्य करना पड़ेगा।" (यंग इंडिया, अक्टुबर 2, 1939)। गाँधीजी ने इन दोनों दृष्टिकोण का समन्वय करने का प्रयत्न किया।
4. हरिजन, मार्च 31, 1946.
5. एम0 के0 गाँधी टुपर्डस नॉन वॉयलेंट सोशियोलिज्म, पृ0 29.
6. वही, पृ0 149.
7. वर्मा. वी0 पी0 : आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन, पृ0 – 267–70.

*****